सेवापराध और नामापराध

शास्त्रों में भगवान् की पूजा के पाँच प्रकार बताये गये हैं– अभिगमन, उपादान, योग, स्वाध्याय और इज्या। देवता के स्थान को साफ करना, लीपना, निर्माल्य हटाना इत्यादि– ये सब कर्म अभिगमन के अन्तर्गत हैं। गन्ध, पुष्प, धूप–दीपादि पूजासामग्री का संग्रह उपादान है। इष्टदेव की आत्मरूप से भावना करना योग है। मन्त्रार्थ का अनुसंधान करते हुए जप करना, सूक्त, स्तोत्र आदि का पाठ करना, गुण, नाम, लीला आदि का कीर्त्तन करना, वेदान्तशास्त्र आदि का अभ्यास करना– ये सब स्वाध्याय हैं। विविध उपचारों के द्वारा अपने आराध्यदेव की पूजा इज्या कहलाती है। ये पाँच प्रकार की पूजाएँ क्रमशः सार्ष्टि, सामीप्य, सालोक्य, सायुज्य और सारूप्य मुक्ति को देनेवाली हैं। इन पाँचों प्रकार की पूजाओं में दो प्रकार के अपराधों से बचना पड़ता है। ये दोनों अपराध हैं– सेवापराध एवं नामापराध। इनसे बचकर किया गया साधन ही फलदायी होता है। सभी प्रकार की देवोपासना में इसका ध्यान रक्खा जाना चाहिये। यहाँ पर हम कुछ प्रमुख सेवापराधों तथा नामापराधों की चर्चा करेंगे। 'आचारेन्दुः' के पृ. 175–176 पर 32 सेवापराधों की चर्चा है। यहाँ पर हम उन्हीं को संक्षेप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

सेवापराध

यानैर्वा पादुकैर्वाऽपि गमनं भगवद्गृहे।।
देवोत्सवाद्यसेवा च अप्रणामस्तदग्रतः।
एकहस्तप्रणामश्च तत्पुरस्तात्प्रदक्षिणम्।।
उच्छिष्टे च तथाऽशौचे भगवद्वन्दनादिकम्।
पादप्रसारणं चाग्रे तथा पर्यङ्कबन्धनम्।।
शयनं भाषणं चैव मिथ्याभाषणमेव च।
उच्चैर्भाषा वृथा जल्पो रोदनादि च विग्रहः।।
निग्रहानुग्रहौ चैव स्त्रीष्वसत्कृतभाषणम्।
अश्लीलकथनं चैव अधोवायुविमोचनम्।।
कम्बलास्तरणं चैव परनिन्दा परस्तुतिः।
शक्तौ गौणोपचारश्च अनिवेदितभक्षणम्।।
तत्तत्कालभवानां च फलादीनामनर्पणम्।
विनियुक्तविशिष्टस्याप्रदानं व्यजनादिनः।।
गुरौ मौनं निजस्तोत्रं देवतानिन्दनं तथा।
तमेव प्रणमेत्प्राज्ञो विष्णुक्षेत्रे (वा शिवादिक्षेत्रे) विनेतरान्।।

(आचारेन्दुः पृ. 175–176)

अर्थात् –

1. सवारी पर चढ़कर अथवा पैरों में खड़ाऊँ या पादुका आदि पहनकर भगवान् के मंदिर में जाना।

2. रथयात्रा, शिवरात्रि, जन्माष्टमी आदि उत्सवों का न करना या उनके दर्शन न करना।

3. भगवान् की मूर्ति के दर्शन करके प्रणाम न करना। अथवा एक हाथ से प्रणाम करना।

4. अशौच अथवा अशुद्धिअवस्था में मूर्ति के दर्शन करना। परिक्रमा करते समय भगवान् के सामने आकर कुछ न घूमकर फिर परिक्रमा करना अथवा केवल सामने ही परिक्रमा करते रहना।

5. भगवान् के विग्रह के सामने पैर फैलाकर बैठना अथवा दोनों घुटनों को ऊँचा करके उनको हाथों से लपेटकर बैठना।

6. भगवान् के विग्रह के सामने सोना, भोजन करना, झूठ बोलना, जोर से बोलना, आपस में बातचीत करना, चिल्लाना, कलह करना, किसी को पीड़ा देना, किसी पर अनुग्रह करना तथा किसी को निष्ठुर या कठोर वचन बोलना।

7. भगवान् के विग्रह के सामने कम्बल से सारा शरीर ढक लेना, दूसरे की निन्दा करना, दूसरे की स्तुति करना तथा अश्लील शब्द बोलना।

8. शक्ति रहते हुए भी गौण अर्थात् सामान्य उपचारों से भगवान् की सेवा–पूजा करना, भगवान् को निवेदित किये बिना किसी भी वस्तु का खाना–पीना तथा किसी शाक या फलादि के अगले भाग को तोड़कर भगवान् के व्यञ्जनादि के लिये देना।

9. भगवान् के विग्रह को पीठ देकर बैठना, उनके विग्रह के सामने दूसरे किसी को भी प्रणाम करना(सिवा आध्यात्मिक गुरु के), अपने मुख से अपनी प्रशंसा करना तथा किसी भी अन्य देवता की निन्दा करना।

10. गुरुदेव की अभ्यर्थना, कुशल–प्रश्न और उनका स्तवन न करना।

श्रीवाराहपुराण में जो सेवापराध बताये गये हैं तथा जिनके वर्णन 'वीरमित्रोदयः पूजाप्रकाशः' के पृ. 166–187 पर हैं, उनमें से कुछ की चर्चा इस प्रकार है–

1. अँधेरे में भगवान् के विग्रह का स्पर्श करना तथा नियमों को न मानकर विग्रह का स्पर्श करना। कुत्ते, बिल्ली, चूहे अथवा पक्षी आदि किसी के भी द्वारा उच्छिष्ट द्रव्यों को भगवान् के लिये अर्पित करना।

2. बाजा(जैसे घंटी आदि) या ताली बजाये बिना ही मन्दिर के द्वार को खोलना, भगवान् को अभक्ष्य वस्तुएँ निवेदन करना, पूजा करते समय बोलना तथा पूजा करते समय(उसे रोककर) मलत्याग के लिये जाना।

3. गन्ध और पुष्प चढ़ाने के पहले धूप देना, निषिद्ध पुष्पों से भगवान् की पूजा करना, दँतवन(दातून) किये बिना अर्थात् बिना दाँतों को साफ किये भगवान् के विग्रह की पूजा या उनका

स्पर्श करना, मैथुन करके भगवान् की पूजा तथा उनके विग्रह का स्पर्श करना, रजस्वला स्त्री और मुर्दे का स्पर्श करके भगवान् के विग्रह की पूजा या उनका स्पर्श करना।

4. बिना धोया हुआ वस्त्र पहनकर या दूसरे का वस्त्र पहनकर या मैला वस्त्र पहनकर भगवान् के विग्रह की पूजा या उनका स्पर्श करना।

5. खाया हुआ अन्न पचने से पहले खाकर या पशु-पक्षियों के मांस को खाकर या किसी प्रकार के मादक द्रव्यों का सेवन करके या शरीर में तेल मालिश करके भगवान् के श्रीविग्रह की पूजा या उनका स्पर्श करना।

6. मद्यपान करके मंदिर में प्रवेश करना अथवा पूजा करना।

मद्यपस्तु वरारोहे प्रविशेद्भवनं मम।
दशवर्षसहस्राणि दरिद्रो जायते पुनः।।
सुरां पीत्वापि यो मां तु कदाचिदुपसर्पति।
इति अपराधगणनायामुक्तत्वाच्च।
यस्तु भागवतो भूत्वा कामरागेण मोहितः।
दीक्षितोऽपि पिबेन्मद्यं प्रायश्चित्तं न विद्यते।। (वी. मि. पू. प्र. पृ. 184)

अर्थात्- भगवान् कहते हैं कि जो मद्यपान करके उनके मंदिर में प्रवेश करता है वह दस हजार वर्षोंतक दरिद्र होता है। मद्यपान करके जो उनकी पूजा करता है वह भगवान् का अपराधी है। जो भागवत अर्थात् भगवान् का भक्त होकर अथवा दीक्षित होकर काम एवं राग से मोहित होकर मद्य का पान करता है उसके लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं होता।

गंगास्नान या यमुनास्नान करने से, भगवान् के नाम का आश्रय लेकर नाम-कीर्त्तन करने से सेवापराध छूट जाता है। भगवान् के नाम-जप से सारे अपराध क्षमा हो जाते हैं। 'आचारेन्दुः' के पृ. 176 में पद्मपुराण का एक श्लोक इस प्रकार दिया गया है-

सहस्रनामपाठाच्च गीतापारायणादपि।
तुलसीपूजानाच्चापि अपराधनिवारणम्।।

अर्थात्-भगवान् के सहस्रनामपाठ, गीतापारायण अथवा तुलसी की पूजा से भगवान् विष्णु की सेवा में होनेवाले अपराधों से मुक्ति हो जाती है। इसी प्रकार पंचाक्षर जप, शिवसहस्रनाम अथवा शतरुद्रि पाठ से भगवान् शिव के अपराधों से मुक्ति हो जाती है।

नामापराध

इनकी चर्चा अनेक ग्रन्थों जैसे पद्मपुराण, वाराहपुराण, आनन्द रामायण, हरिभक्ति-विलास तथा नारदमहापुराण में है।

भगवान् का नाम-जप करनेवालों से होने वाले अपराधों की संख्या दस बतायी गयी है।

उदाहरणार्थ –

गुरोरवज्ञां साधूनां निन्दां भेदं हरे हरौ।
वेदनिन्दां हरेर्नामबलात्पापसमीहनम्।।
अर्थवादं हरेर्नाम्नि पाषण्डं नामसंग्रहे।
अलसे नास्तिके चैव हरिनामोपदेशनम्।।
नामविस्मरणं चापि नाम्न्यनादरमेव च।
संत्यजेद् दूरतो वत्स दोषानेतान्सुदारुणान्।। (नारदमहापुराण पूर्व. 82/22-24)

अर्थात्–

1. सत्पुरुषों की निन्दा करना।

2. शिव एवं विष्णु के नामों में अर्थात् भगवान् के विविध नामों में ऊँच-नीच की कल्पना करना।

3. गुरु का अपमान करना।

4. वेदादि शास्त्रों की निन्दा करना।

5. 'भगवान् के नाम की जो इतनी महिमा कही गयी है, यह केवल स्तुतिमात्र है, असल में इतनी महिमा नहीं है'-इस प्रकार भगवान् के नाम में अर्थवाद की कल्पना करना।

6. 'भगवान् के नाम से पापों का नाश होता है, पाप करके नाम लेने से पाप नष्ट हो ही जायँगे, पाप हमारा क्या कर सकते हैं?' इस प्रकार भगवान् के नाम का आश्रय लेकर नाम के बल पर पाप करना।

7. नाम-जप को यज्ञ, तप, दान, व्रत आदि शुभ कर्मों के समान मानना।

8. श्रद्धारहित और सुनना न चाहनेवाले व्यक्ति को नाम का उपदेश करना।

9. नाम की महिमा सुनकर भी नाम में प्रीति न करना और

10. 'मैं' और 'मेरे' के फेर में पड़कर विषयभोगों में आसक्त होना।

ये दस नामापराध हैं। नामापराध से भी छुटकारा नाम के जप-कीर्त्तन से ही मिलता है। पद्मपुराण में कहा गया है कि–

नामापराधयुक्तानां नामान्येव हरन्त्यघम्।
अविश्रान्तप्रयुक्तानि तान्येवार्थकराणि च।। (पद्मपुराण/ब्रह्मख./25/23)

अर्थात्– 'नामापराधयुक्त पुरुषों का पाप नाम ही हरण करता है और निरन्तर कीर्त्तन किये जाने पर वह सारे मनोरथों को पूरा करता है।'

(यह लेख गीताप्रेस, गोरखपुर के कल्याण के 'साधनांक', 'आचारेन्दुः' तथा 'वीरमित्रो. पूजाप्र.' पर आधारित है।)

❁❁❁❁❁❁